ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 121-124

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- II, Issues-24, YEAR- April-June-2022

लौकिक वाङ्मय में प्रयाग

छोटे लाल यादव

शोध अध्येता– प्राचीन इतिहास, पुरातत्त्व एवं संस्कृति विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ0प्र0) भारत

Received-18.04.2022, Revised-24.04.2022, Accepted-28.04.2022 E-mail: chhotelaly01@gmail.com

सारांशः – *भारत तीर्थों की भूमि है। देवता भी यहाँ जन्म लेने के लिए लालायित रहते हैं, परन्तु प्रयाग की महिमा सारे तीर्थों में अनोखी है। भगीरथी के कल–कल का निनाद सुनकर यहाँ पशु पक्षी भी अमर हो जाते हैं। माघ के महीने में जब सूर्य मकर राशि में प्रवेश कर जाता है तो दूर–दराज से श्रद्धालुगण स्नान हेतु तीर्थराज प्रयाग को आते हैं और स्नान कर मोक्ष की प्राप्ति करते हैं। लोक की अवधारणा–'लोक' शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के लोक दर्शने धातु से हुई है। इसका धातुज अर्थ 'देखने वाला' तथा रुढ़िगत् अर्थ 'सामान्य लोग है।' लोग एवं लोक दोनों ही शब्द अत्यन्त पुराने हैं। इसका प्रयोग अथर्ववेद' में भी हुआ है। यह ज्ञात है कि लोग एक सामान्य शब्द एवं लोक परिभाषिक शब्द है। लोक शब्द को समझने के लिए मनुष्य वाची जन, मनुष्य, नर आदि शब्दो पर भी विचार करना आवश्यक हो जाता है। पं0 श्रीपद दामोदर सातवलेकर के अनुसार ये संज्ञाएँ मनुष्य की श्रेणी बतलाती है। उनके अनुसार जन का अर्थ है–'प्रजनन करने वाला।' जन में इसके अतिरिक्त कोई गुण नहीं होते। जन के लिए 'आत्महनो जनाः' कहा गया। लोक केवल देखते हैं, आत्मोद्धार के मार्ग पर उन्नति नहीं करते। मनन करने वाला मनुष्य कहलाता है और जो भोगों में रमण नहीं करता, वह नर कहलाता है। इसका स्वरुप है–'न रमते नरति इति नरः।' इसलिए यह भी कहा गया है कि 'न कर्म लिप्यते नरे।'*[2]

कुंजीभूत शब्द– लालायित, भगीरथी, तीर्थराज प्रयाग, मोक्ष, लोक की अवधारणा, व्युत्पत्ति, लोक दर्शने, रुढ़िगत्, सामान्य।

'लोक' शब्द फोक का अनुवाद मात्र नहीं है। 'FOLK' शब्द की उत्पत्ति 'FOLC' से हुई है जो एंग्लोसेक्शन शब्द है। जर्मन में यह 'Volk' रूप में प्रचलित है। यह शब्द असभ्य और संस्कृतिहीन समाज एवं जाति का द्योतक है। जबकि 'लोक' का अर्थ हमारे मनीषियों की दृष्टि में 'इन्द्रिगोचर' संसार है, जो प्रत्यक्ष अनुभव का विषय है। वाल्मीकि ने नारद से पूछा कि कोन्वस्मिन साम्प्रतम् लोके गुणवान कस्य वीर्यवान?

लोक में यानी संसार में कौन ऐसा व्यक्ति है, जो गुणवान वीर्यवान है। वाङ्मय एक संस्कृत शब्द है जिसका हिन्दी अर्थ साहित्य होता है। हम जानते है कि लौकिक संस्कृत साहित्य का आरम्भ आदिकाव्य रामायण से ही माना जाता है। इसे लौकिक काव्यमाला का प्रथम गुच्छ स्वीकार किया जाता है। बाल्मीकि रामायण देश के गौरव–गाथा का प्रतीक रहा है। उसके आदर्शत्व का सादृश्य अन्य ग्रन्थों में बड़ी मुश्किल से प्राप्त होता है। सम्पूर्ण भारत इस आदिकाव्य को एक लय में आदर्श एवं पवित्र काव्यग्रन्थ के रूप में स्वीकार करता है। इस काव्यग्रन्थ का प्रभाव कालिदास, भवभूति एवं गोस्वामी तुलसीदास जैसे मनीषी कवियों के ऊपर भी पड़ा है –

कर्वान्दुं नौमि बाल्मीकि यस्य रामायणी कधाम्। चन्द्रिकामिवचिन्वन्ति चकारों इव साधवः ।।[3]

बाल्मीकि रामायण में तीर्थराज प्रयाग को धन–धान्य से परिपूर्ण एक समृद्धिशाली परिक्षेत्र बताया गया है। मृगया विनोद–हेतु वराह, ऋष्य, पृषत्, और महामरू नामक चारो महामृगों पर मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र द्वारा प्रयाग में ही बाण–वर्षा की गयी।

रात के समय वट वृक्ष के नीचे सोये हुए मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी सूर्योदय होने पर जगे और प्रयाग के यशस्वी परिक्षेत्र को आश्चर्य के साथ निहारते हुए आगे बढ़े। श्रीरामचन्द्र जी लक्ष्मण एवं सीता के साथ सुखपूर्वक प्रयाग परिक्षेत्र का भ्रमण एवं दर्शन किये। जब शाम हो गयी तब श्रीराम ने लक्ष्मण से कहा–'हे लक्ष्मण देखो वह जो प्रयाग के पास भगवान अग्निदेव का ध्वजारूप उत्तम धूम उठ रहा है। उससे मालूम होता है कि मुनिवर भारद्वाज का निवास स्थान वही है।

प्रयागमभितः पइय सौमित्रे धूममुत्तमम्। अग्नेर्भगवतः केतुं मन्ये संनिहितो मुनिः।।[4]

अब निश्चय ही हम लोग गंगा–यमुन के संगम के समीप आ गये हैं, क्योंकि कर्णेन्द्रियों में जो आवाज पड़ रही है, वह निश्चय ही दो नदियों के जल के टकराव की ही है –

नूनं प्राप्तां स्म ममभेदं गंगायमुनर्योवयम्। तथाहि श्रूयते शब्दो वारिणोर्वारिघर्शजः।।[5]

तुलसीदास के रामचरित–मानस में तीर्थराज प्रयाग का प्रसंग बार–बार आता है। ननिहाल से लौटने के बाद जब भरत को समस्त घटना चक्र अभिज्ञात होता है तो वे श्रीराम को वन से वापस बुलाने के उद्देश्य से चित्रकूट जाने की तैयारी करते हैं। इसी क्रम में वे प्रयाग पहुँचते हैं–

भरत तीसरे पहर कहँ कीन्ह प्रबेसु प्रयाग। कहत राम सिय रामसिय उमगि उमगि अनुराग।।[6]

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- II, Issues-24, YEAR- April-June-2022

अर्थात् तीनों माताओं सहित, अन्य सभी लोग तो पहले ही जा चुके थे, भरत पैदल चलते हुए तीसरे प्रहर प्रयाग पहुँचे। उल्लेखनीय है कि भरत के मन में चित्रकूट शीघ्र पहुँचने की इच्छा तो थी ही, परन्तु अपनी धार्मिक प्रवृत्ति के कारण तीर्थ को बायें नहीं छोड़ना चाहते थे अतः पहले प्रयाग पहुँचे। सब लोग यह जानते थे कि श्रीराम जहाँ तक पैदल गये हैं, वहाँ तक भरत भी पैदल ही जाएंगे।

समस्त लोगों के स्नान के पश्चात् भरत ने त्रिवेणी संगम के श्वेत–श्याम जल में विधिपूर्वक स्नान किया। तत्पश्चात् ब्राह्मणों को दान दिया और उनका सम्मान किया।

देखत श्यामल धवल हलोरे। पुलकि सरीर भरत कर जोरे।। सकल काम प्रद तीरथराऊ। वेद विदित जग प्रगट प्रभाऊ।।[7]

गंगा–यमुना के श्वेत–श्यामल जल को देखकर भरत जी का मन पुलकित हो उठा और वे श्रद्धावनत हो गये। उन्होंने हाथ जोकर कहा कि–'हे तीर्थराज! आप सबकी कामनाओं को पूर्ण करने में सक्षम है। आपका प्रभाव वेदों में वर्णित हैं और उसे सारा संसार जानता है।' तीर्थराज प्रयाग को सर्वशक्तिमान मानकर भरत जी जीवन भर मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी के युगल श्रीचरणों के प्रति सेवकधर्म निभाने की प्रार्थना करते हैं–

अरथ न धरम न काम रूचि, गति न चहौं निरबाना। जनम जनम रति राम पद यह वरदानु न आन।।[8]

अर्थात् भरत जी कहते हैं कि मुझे चारों पुरुषार्थों में से किसी की भी कामना नहीं है। अर्थ, धर्म और काम की ही नहीं, मुझे मोक्ष (निर्वाण) और सद्गति की भी कामना नहीं है। हे तीर्थराज् आप मुझे केवल यह वरदान दें कि जन्म–जन्मान्तर तक श्रीराम के चरणों के प्रति मेरी भक्ति अविचलित भाव से बनी रहे। इसके अतिरिक्त मुझे किसी अन्य वस्तु की कोई अभिलाषा नहीं है। पिता की आज्ञा का पालन करते हुए श्रीराम अयोध्या से वन–गमन के लिए निकलते हैं। श्रृंगवेरपुर के घाट से गंगा नदी को पार करके लक्ष्मन और सीता सहित वे प्रयाग पहुँचते हैं। प्रयाग में त्रिवेणी संगम है और संगम के समीप एक दिव्य आश्रम है, जिसमें महामुनि भारद्वाज अपने शिष्यो–सहित निवास करते हैं–

भारद्वाज मुनि बसहिं प्रयागा। तिन्हहि राम पद अति अनुराग।। तापस सम दम दया निधाना। परमारथ पथ परम सुजाना।।[9]

महर्षि बाल्मीकि के शिष्य मुनि भारद्वाज तीर्थराज प्रयाग में रहते थे। उनके ह्रदय में मर्यादापुरूषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी के चरणों के प्रति अति अनुराग था। उन्होंने वेदों के सार ओंकार तत्व को प्राप्त कर लिया था। वे षम, दम, और दया निधान के साथ परमार्थ मार्ग में निपुण तापस थे। उन्होने समस्त इन्द्रियों को निजवश कर लिया था। इन्हीं गुणों को ध्यान में रखकर गोस्वामी तुलसीदास ने उन्हें दया निधान एवं परम सुजान कहा है। भक्तगण माघव के चरण कमलों की पूजा एवं अक्षयवट का स्पर्श करके पुलकित होते हैं। वहीं पर भारद्वाज मुनि का आश्रम भी है, जिसे पवित्रता का प्रतीक माना जाता है। गोस्वामी तुलसीदास ने इसे संदर्भित करते हुए लिखा है–

पूजहिं माघव पद जलजाता। परसि अखय बतु हरशहिं गाता।। भारद्वाज आश्रम अति पावन। परम रम्य मुनिवर मन भावन।।[10]

भारद्वाज जी का मनभावन आश्रम ऋषियों–मुनियों को दैहिक दैविक भौतिक तापों से मुक्ति प्रदान करता है। भक्तों के लिए तो यह स्थान अनुपम है। वहाँ भक्त त्रिवेणी में स्नान कर, मुनियों के मुख से मुखरित अमृत वचनों का श्रवण रूपी अंजलि से आचमन करते हैं। इस प्रकार अपने जीवन रूपी नौका को संसार–सागर से पार करते हैं।

महाकवि कालिदास विरचित 'रघुवंशम्' महाकाव्य के तेरहवें सर्ग में तीर्थराज प्रयाग का अत्यन्त मार्मिक वर्णन किया गया है। भगवान राम द्वारा लंकापति रावण का वध करने के पश्चात् लंका के राजसिंहासन पर विभीषण को बैठाया गया। तत्पश्चात् पुष्पक विमान पर आरुढ़ होकर मर्यादापुरुषोत्तम ने अयोध्या के लिए प्रस्थान किया इस यात्रा के दौरान मार्ग में अवस्थित तीर्थराज प्रयाग के मनोरम दृश्य को राम ने अपनी भार्या सीता को दिखाते हुए कहा–'हे सीते! यहाँ पर यमुना जी की श्यामल लहरों से मिली हुई श्वेत तरंगो से सुशोभित भगवती गंगा की सुन्दरता को निरखो। किसी स्थान पर यह चमकीली इन्द्रनील मणियों से गुंथी हुई मौलि के समान प्रतीत होती हैं तो कहीं पर यह नील–श्वेत कमलों के मिश्रण से निर्मित मौलि के सदृश्य प्रतीत होती हैं। इधर देखो! यहाँ गंगा श्यामवर्गीय हंसों की श्रेणी से मिश्रित श्वेत हंसों की श्रेणी के सदृश्य सुशोभित हो रही है। कहीं–कहीं पर यह वृक्ष के नीचे की उस चाँदनी के सदृश्य प्रतीत होती हैं, जिसके बीच–बीच में वृक्षों के पत्तों की छाया पड़ रही है। कहीं पर ऐसा भी प्रतीत होता है जैसे कि शरद ऋतु के बादलों के बीच से नीलाम्बर देख रहा है और कहीं पर ऐसा प्रतीत होता है मानो भस्म युक्त भगवान शंकर के शरीर पर सर्प लिपटे हों।[11]

'महावीर चरितम्' में बनवास गमन के संदर्भ में प्रयाग का वर्णन हुआ है। वनगमन के समय लक्ष्मण राम से कहते

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- II, Issues-24, YEAR- April-June-2022

हैं–'आर्य से निशादराज जो श्रृंगवेर के निवासी हैं, उन्होंने कहा था कि वहाँ पर विराध नामक राक्षस उपद्रव मचा रहा है। इस पर भगवान राम कहते हैं कि तब विराध की मृत्यु के लिए प्रयागपार्श्ववन्ती गंगा तट पर स्थित चित्रकूट पर्वत जाकर ऋषियों से युक्त तीर्थ स्वरूप दण्डकारण्य को राक्षस मुक्त करना होगा।'

तेन हि विराधहतकोन्मथनाय संनिकृष्टप्रयाग। मनुषक्तमन्दाकिनी पवित्र मेखलं चित्रकूटाचलमपेत्य।[12]

भोजकृत 'चम्पूरामायणम्' में भी प्रयाग का वर्णन मिलता है। वनगमन समय राम सीता से कहते हैं– 'हे सीते! पितरों के तर्पण में उपयोग प्राप्त करने के योग्य भाग्य से परिपूर्ण भगवती भगीरथी की षरण को हम प्राप्त कर चुके हैं।

मेध्याश्वमार्गपरिमार्गण संभवस्य दिव्यौशधिं कपिलकोयमहाज्वरस्य। तातानुतर्पणपचेलिमभाधेयं। भागीरथीं भगवती षरणं भजामः।।[13]

भट्टि महाकाव्य के तृतीय सर्ग में भी प्रयाग का वर्णन आया है। उसमें दिखाया गया है कि जब भरत श्रीराम को वापस अयोध्या लाने के लिए जाते हैं, तब वे प्रयाग स्थित मुनि भारद्वाज के आश्रम में प्रवेश करते हैं, जिस स्थान पर राम, लक्ष्मण एवं सीता ने फलों से अपनी भूख एवं शीतल जल से प्यास को शान्त कर शयन किया था।

हरिवंशराय 'बच्चन' ने लोकधुन पर आधारित अपनी एक कविता में तीर्थराज प्रयाग का वर्णन इस प्रकार किया है–

नाव बिराजी केवट राजी डाँड़ छुई भर, बस आ पहुँची संगम पर की भीड़। डोंगा डोले डोंगा डोले। मन मुसकाई उतर नहाई आगे पाँव न देना, रानी, पानी, अगम–गम्भीर। डोंगा डोले नित गंग–जमुन के तीर डोंगा डोले।[14]

लोक जीवन के चितेरे कवि कैलाष गौतम ने अपनी प्रसिद्ध हास्य कविता 'अमौसा का मेला' में प्रयाग के माघ मेले और 'मौनी अमावस्या' के भीड़ का बहुत ही सूक्ष्म अंकन किया है–

भक्ति के रंग में रंगल गाँव देखा, धरम में करम में सनल गाँव देखा, अगल में बगल में सगल गाँव देखा, अमौसा नहाय चलल गाँव देखा, कान्हें पर बोरा, कपारे पर बोरा, गुलब्बन के दुल्हन, चलै, धीरे–धीरे, भरल नाव जइसे नदी तीरे–तीरे सजल देह जइसे गौने की डोली, हँसी है बताशा, शहद हउवे बोली।[15]

माघ के पावन महीने में मुनियों का समूह तीर्थराज प्रयाग में उपस्थित होकर ब्रह्मनिरूपण करता है। भक्तगण उनकी अमृतवाणी को सुनकर निज–जीवन धन्य करते हैं। संत–महात्माओं के भक्तिमय आचरण के चलते स्थावर तीर्थराज, जंगम तीर्थराज में तब्दील हो जाता है–

ब्रह्म निरुपन धरम बिधि बरनहिं तत्व विभाग। कहहिं भगति भगवंत कै संजुत ग्यान बिराग।[16]

प्रयाग परिक्षेत्र वह दुर्गम दृढ़ दुर्ग है, जिसे शत्रु स्वप्न में भी ध्वस्त नहीं कर सकते। संसार के समस्त तीर्थ प्रयागराज के सवल सैनिक है, जो पाप विनाश में जुटे हुए हैं। यहाँ पूरे माघभर स्नान की क्रिया जारी रहती है। माघ माह की समाप्ति पर मुनिगण अपने–अपने आश्रमों को लौट जाते हैं। प्रत्येक वर्ष माघ के महीने में यहाँ परालौकिक आनन्द परिव्याप्त हो जाता है। शाम के समय दुधिया रोशनी में नहाया तट संगम की सुषमा में चार चाँद लगा देता हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अथर्ववेद–18/03/52 सायण भाष्य, शर्मा रामचन्द्र, सनातन धर्म मंत्रालय, मुरादाबाद, 1987 ई0।
2. पोद्दार, हनुमान प्रसाद–कल्याण मानवता अंक गीता प्रेस, गोरखपुर, वर्ष 33, संख्या–01 पृष्ठ –163.
3. शाङ्गधर पद्धति–8/1– सं0 – पीटर पीटर्सन चौखम्भा संस्कृत प्रतिष्ठान दिल्ली 1987.
4. रामायण–2/54/5, गीताप्रेस गोरखपुर सं0–2067.
5. रामायण –2/54/6 गीताप्रेस, गोरखपुर सं0–2067.
6. तुलसीदास, गोस्वामी–रामचरितमानस (अयोध्याकाण्ड) टी0–पोद्दार, हनुमान प्रसाद, गीता प्रेस गोरखपुर सं0 –2067, पृष्ठ –496.
7. वहीं पृष्ठ–497.
8. वहीं पृष्ठ–497.
9. तुलसीदास, गोस्वामी–रामचरितमानस (बालकाण्ड), टी0–पोद्दार, हनुमान प्रसाद, गीता प्रेस, गोरखपुर सं0–2067, पृष्ठ सं0–50.
10. वहीं पृष्ठ –50.
11. रघुवंशम्–13/58–भारत प्रकाशन मन्दिर अलीगढ़ 2008.
12. महावीरचरितम् अंक–04, परवारवर्णी, दीपचन्द्रजी प्रकाशक–श्रीयुक्त बालब्रह्मचारी सेठसवा भाई संखमलदास

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- II, Issues-24, YEAR- April-June-2022

श्रीवीर–निर्वाणाब्द–2463.

13. चम्पूरामायणाम्–अध्योध्याकाण्ड–51–भोजराज प्रणीतम् व्याख्याकार–शास्त्री, रामनाथं
14. बच्चन हरिवंशराय–त्रिभंगिमा (पगला मल्लाह) राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली, 1961, पृष्ठ–05.
15. गौतम कैलाश–समग्र (अमौसा का मेला) लोकभारती पेपर बैंक्स, इलाहाबाद–सं0 –गौतम, श्लेष, 2017, वाल्यूम–II, पृष्ठ –193त्रिपाठी चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2007.
16. तुलसीदास, गोस्वामी–रामचरितमानस (बालकाण्ड, टी0– पोद्दार, हनुमान प्रसाद, गीता प्रेस, गोरखपुर सं0–2067, पृष्ठ –51.

*****